© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 1 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

महर्षि व्यासकृत महाभारत की महत्ता

निधि यादव
(जे.आर.एफ.)
शोधच्छात्रा,
संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

महाभारत शब्द दो शब्दों के योग से निष्पन्न है जिसमें महा शब्द का अर्थ है महत् अर्थात् बड़ा तथा भारत शब्द का सम्बन्ध दुष्यन्त के पुत्र भरत से है जिसके माध्यम से भरतवंशियों की गौरवमयी गाथा तथा महायुद्ध की ओर संकेत प्राप्त होता है। इसके साथ ही तत्कालीन भारतीय समाज, संस्कृति, सभ्यता, वेद, उपनिषद, इतिहास, पुराण, चातुर्यवर्ण्य विधान, ग्रह, नक्षत्रादि, आर्यावर्त संस्कृति की गौरवगाथा की ओर भी संकेत प्राप्त होता है। उपर्युक्त तथ्य महाभारत की महनीयता को प्रदर्शित करता है। व्युत्पत्ति की दृष्टि से देखें तो महाभारत शब्द आख्यानं शब्द से सम्बंधित है अर्थात् ऐतिहासिक काव्य।[1] भारत–सावित्री में डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल ने महाभारत के नामकरण व व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में लिखा है कि ''कौरव व पाण्डव दोनों भरतवंशी हैं इसलिए वे भारत के नाम से जाने जाते हैं। भरतवंशियों के संग्राम या युद्ध का नामकरण भी भारत ही किया गया है।'' पाणिनीय सूत्र के अनुसार योद्धाओं के नाम से युद्ध का नाम रखा जाता था।[2]

महाभारत के आश्वमेधिक पर्व में महाभारत के युद्ध का उल्लेख प्राप्त होता है।[3] जिसका अर्थ है 'बृहद् भारत युद्ध' अर्थात् भरतों के मध्य हुआ बड़ा संग्राम। इसके अतिरिक्त महाभारत के आदिपर्व में महाभारताख्यम्[4] प्रयुक्त शब्द के आधार पर भारतों के महान संग्राम की कहानी या महाभारताख्यानों का संक्षिप्त स्वरूप ही महाभारत है।[5]

महाभारत के महत्त्व को अन्य भारतीय वाङ्मय में भी उद्भाषित किया गया है। जीवन के लौकिक तथा पारलौकिक दोनों ही क्षेत्रों पर इसका समान रूप से प्रभाव दिखायी देता है। भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा हिंदू धर्म का विविध चित्रण महाभारत में जिस प्रकार से उपलबध हो जाता है वैसा अन्यत्र नहीं हो पाता। चारों वर्णों, चारों आश्रमों, राजाओं, गृहस्थों, मुनियों, मुमुक्षुओं आदि सभी के कर्त्तव्यों, नीतियों तथा आचारों का समुचित दिग्दर्शन होने के कारण धर्मशास्त्र के रूप में महाभारत को सर्वोच्च प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। मानव जीवन का ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं बचा है जिसके सुन्दर समन्वय हेतु महाभारत में कोई न कोई शिक्षा उपलब्ध न हो। महाभारत एक ऐसा विश्वकोष है जिसमें प्राचीन भारत की ऐतिहासिक धार्मिक, दार्शनिक सभी प्रकार की अमूल्य

---

[1] इण्डियन विजिडम डॉ0 मोनियर विलियम–हिंदी अनुवादक डॉ0 रामकुमार राय पृष्ठ–362

[2] अष्टाध्यायी 4–2–56

[3] महाभारत, आश्वमेधिक पर्व 81/8

[4] महाभारत, आदिपर्व 56/30

[5] भारत सावित्री–वासुदेव शरण अग्रवाल पृष्ठ–3

धरोहर सुरक्षित है। महर्षि वेदव्यास ने भारतीय अर्थनीति, राजनीति, आध्यात्मशास्त्र आदि के सिद्धान्तों का सारांश इतनी सुन्दरता से इस ग्रन्थ में प्रस्तुत किया है कि इसका अध्ययन करने पर यह प्रतीत होता है कि वास्तव में भारत के धर्म तथा तत्त्वज्ञान का यह विश्वकोष है।

महाभारत में लिखा है कि यह ग्रन्थ एक साथ ही अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र तथा कामशास्त्र है।[6] इसके स्वरूप को विश्वकोषात्मक रूप में स्वीकारा गया है।[7] यह कथाओं का मूल आधार है।[8] इससे बृहद् कोई रचना नहीं हो सकती।[9] कवियों को यह बुद्धि प्रदान करती है।[10] इसके प्रत्येक शब्द अमृत के उस मानसरोवर के समान है जिसमें रमण करने वाला सहृदय हंस कभी भी तृप्त नहीं हो सकता।

महाभारत की उपयोगिता इसलिए भी अधिक मानी जाती है क्योंकि इसमें भारतीय संस्कृति के प्राण अथवा धर्म को विस्तृत रूप से स्पष्ट किया गया है। पुरुषार्थ चतुष्टय तथा वर्णाश्रमों को बृहद् रूप से समझाया गया है। महाभारत के स्वर्गारोहणपर्व में बताया गया है कि ''धर्म से देश की उन्नति होती है तथा अधर्म से उसका विनाश होता है। धर्म शाश्वत एवं चिरस्थायी है इसलिए लोभ या भयवश कभी भी धर्म का परित्याग नहीं करना चाहिए।[11] कर्म के महत्त्व को बताते हुए व्यास ने कहा है कि ''कर्म से विमुख मानव, मानव की पदवी से सदा के लिए वंचित रह जाता है, इसलिए धरती पर जब तक रहना है, मनुष्य को कर्म में संलग्न रहना चाहिए। भारतभूमि कर्मभूमि है और कर्म का फल प्रत्येक मनुष्य को स्वर्ग में प्राप्त होता है।[12] महाभारत में युद्ध का वर्णन होने के कारण यह वीर रस के काव्य के रूप में जाना गया, परवर्ती कवियों के लिए यह उपजीव्य ग्रन्थ के रूप में प्रसिद्ध हुआ। महाभारत में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष–इन चारों पुरुषार्थ के साधनों का इतना व्यापक विवेचन हुआ है कि इसके अतिरिक्त कभी भी कुछ नवीन सामग्री नहीं प्राप्त होती।[13]

---

[6] महाभारत, आदिपर्व 2/28–अर्थशास्त्रमिदं प्रोक्तं धर्मशास्त्रमिदं परम्।

कामशास्त्रमिदं प्रोक्तं व्यासेनामित बुद्धिना।

[7] महाभारत, आदिपर्व 1/62–70

[8] महाभारत, आदिपर्व 2/37–अनाश्रित्येदमाख्यानं कथा भूमि न विद्यते।

आहार मनपाश्रित्य शरीरस्यैव धारणम्।।

[9] महाभारत, आदिपर्व 2/390–अस्य काव्यं कवयो न समर्था विशेषणे।

साधोरिव गृहस्थस्य शेषास्त्रय् इवाश्रयाः।।

[10] महार्षि आदिपर्व 2/385–इतिहासोत्तमादस्याज्जान्ते कवि बुद्धयः।

पंचभ्यइव भूतेभ्यो लोक संविधयस्तयः।।

[11] महाभारत, स्वर्गारोहण पर्व 5/63

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद् धर्मत्येजेज्जीवितस्यापिहेतोः।

धर्मो नित्यः सुख दुखे त्वनित्ये, जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः।।

[12] महाभारत, आश्वमेधिक पर्व 43 /27

[13] महाभारत, आदिपर्व 92/53–धर्मेचाऽर्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।

यदिहास्ति तदन्यत्र यन्ने हास्ति न तत्र क्वचित्।।

वैशम्पायन ने इस ग्रन्थ की प्रशंसा करते हुए कहा है कि महाभारत धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र और मोक्षशास्त्र है।[14] महाभारत में वर्णित है कि ''अपने धर्म के लिए प्राण त्याग देने में लेशमात्र भी संकोच नहीं करना चाहिए।[15]

अर्थ की तुलना में महाभारत के उद्योगपर्व में धन को परमधर्म बताया गया है और कहा गया है कि निर्धन व्यक्ति का जीवन मृतक के समान है।[16] भीष्म ने महाभारत में यह भी बताया कि यदि काम धर्ममूलक नहीं है तो वह भी नाश का कारण होता है। उन्होंने धर्म को श्रेष्ठ, अर्थ को मध्यम तथा काम को दोनों से निम्न कहा है।[17] मोक्ष को महाभारत का मुख्य प्रतिपाद्य कहा जाता है। मोक्ष की प्रतिष्ठापना इस ग्रन्थ में अनेक स्थलों पर दिखायी देती है जैसे–भगवद्गीता[18], पराशरगीता[19], हंसगीता[20], अनुगीता[21], ब्राह्मणगीता[22] इत्यादि। अनुगीता में तो मोक्ष को अमृत कहा गया है।[23]

महाभारत की रचना व्यास ने इसी दृष्टिकोण से किया था कि मानव जाति इस संसार के नाना प्रपंचात्मक तथा निःसारता को समझ सके और उनमें वैराग्य की प्रवृत्ति जागृत हो तथा वे मोक्ष के लिए प्रयत्नशील हो सकें। महाभारत की महत्ता इसमें है कि इसकी कथा को श्रवण करने मात्र से अन्य किसी भी कथा को सुनने की इच्छा नहीं होती। यह विशेषता इस ग्रन्थ के महत्ता तथा व्यापकता का परिचायक है और इस तथ्य की उद्घोषणा ग्रन्थकार ने स्वयं की थी–

श्रृत्वात्विदमुपाख्यानं श्राव्यमन्यन्न रोचते।
पुंस्को किलगिरं श्रुत्वा रूक्षा ध्वांक्षस्य वागिवा।।[24]

महाभारत में मानव जगत के कल्याणार्थ आचार–संहिता के पालन पर विशेष रूप से बल दिया गया है। अनुशासनपर्व में तो पुरुषार्थ को दैव से श्रेष्ठ बताया गया है और कहा गया है कि ''जिस प्रकार बीज खेत में

---

[14] महा0, आदिपर्व 62/23– धर्मशास्त्रामिदं पुण्यं अर्थशास्त्रमिदंपरम्।
कामशास्त्रमिदं प्रोक्तं व्यासेनामित बुद्धिनाम्।।

[15] श्रीमद्भवगद्गीता 3/35– स्वधर्मो निधनः परधर्मो भयावहः।

[16] महाभारत, उद्योग पर्व 71/31 धनमाहुः परंधर्म धनेसर्वप्रतिष्ठितम्।
जीवन्ति धनिनो लोकेमृता ये त्वधना नराः।।

[17] महाभारत, शांतिपर्व 167/8–धर्मो राजन् गुणः श्रेष्ठो मध्यमो ह्यर्थ उच्यते।
कामो यवीयानिति च प्रवदन्ति मनीषिणः।।

[18] महाभारत, भीष्म पर्व अ0 24–42.

[19] महाभारत, शान्तिपर्व अध्याय 290–298

[20] महाभारत, शान्तिपर्व अध्याय 299

[21] महाभारत, आश्वमेधिकपर्व 19/16

[22] महाभारत, आश्वमेधिक पर्व 20/34

[23] महाभारत, आश्वमेधिक पर्व 19/60

[24] महाभारत, आदिपर्व 2/84, 62/53

बिना बोये फल नहीं दे सकता, उसी प्रकार दैव भी बिना पुरुषार्थ के सिद्ध नहीं हो सकता।'' पुरुषार्थ खेत है तो दैव बीज है।[25]

मनुष्य को अपने किये गये कर्म का फल भुगतना पड़ता है अकृत कर्म का नहीं। सुख प्राप्ति हेतु सदा शुभ कर्म ही करना चाहिए।[26]

शुभेन कर्मणा सौख्यं दुःखं पापेन् कर्मणा।
कृतं फलति सर्वत्र नाकृतं भुज्यते क्वचित्।।

महाभारत में परमात्मा की व्यापकता का निरूपण करते हुए कहा गया है कि ब्रह्म सभी जगह और प्रत्येक परिस्थितियों में विद्यमान है।[27]

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि महाभारत की महत्ता इसलिए भी है कि इसमें विभिन्न संस्कृतियों का समन्वय, राष्ट्रीय भावना का उदय, आसुरी प्रवृत्तियों के दमन का प्रयास, भौगोलिक अनेकता में एकता, जीवन दर्शन की व्यावहारिक दृष्टि से व्याख्या, अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता, राजनीति, कूटनीति, छद्मनीति तथा अनीति का व्यावहारिक प्रदर्शन, राजधर्म का सर्वांगीण निरूपण, आख्यान साहित्य का अक्षयकोष, नीतिशास्त्र के बहुमूल्य नीति एवं चतुर्वर्ग की सभी समस्याओं का समाधान सरलतापूर्वक मिल जाता है। इस ग्रन्थ के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि ग्रन्थ में विरूपता में एकरूपता, अनेकता में एकता, विशृंखलता में समन्वय, व्यवहार में आदर्श, अशान्ति में शांति, प्रेम में श्रेय और धर्मार्थ में मोक्ष का समन्वय है।[28]

---

[25] महाभारत, अनुशासनपर्व 6 /7 यथा बीजं बिना क्षेत्रयुप्तं भवन्ति निष्फलम्।
तथा पुरुषकारेण बिना दैवं न सिध्यति।
महाभारत, अनुशासनपर्व 6/8 क्षेत्रं पुरुषकारस्तु दैवं बीजमुदाहृतम्।
क्षेत्रबीजम समायोगात् ततः सस्यं समृद्धयते।।

[26] महाभारत, अनुशासनपर्व 6/10

[27] महाभारत, शांतिपर्व 47/84–यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं सर्वं सर्वत्तश्च यः।
यश्च सर्वमयो देवः तस्मै सर्वात्मने नमः।।

[28] संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास–बलदेव उपाध्याय, पृ0 73